गुरु नानक - सबद ८७

तृसना माइआ मोहणी सुत बंधप घर नारि ॥

रागु सिरीरागु, गुरु नानक, गुरु ग्रंथ साहिब, ६१

तृसना माइआ मोहणी सुत बंधप घर नारि ॥
धनि जोबनि जगु ठगिआ लबि लोभि अहंकारि ॥
मोह ठगउली हउ मुई सा वरतै संसारि ॥१॥
मेरे प्रीतमा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥
मै तुझ बिनु अवरु न भावई तूँ भावहि सुखु होइ ॥१॥ रहाउ ॥
नामु सालाही रंग सिउ गुर कै सबदि संतोखु ॥
जो दीसै सो चलसी कूड़ा मोहु न वेखु ॥
वाट वटाऊ आइआ नित चलदा साथु देखु ॥२॥
आखणि आखहि केतड़े गुर बिनु बूझ न होइ ॥
नामु वडाई जे मिलै सचि रपै पति होइ ॥
जो तुधु भावहि से भले खोटा खरा न कोइ ॥३॥
गुर सरणाई छुटीऐ मनमुख खोटी रासि ॥
असट धातु पातिसाह की घड़ीऐ सबदि विगासि ॥
आपे परखे पारखू पवै खजानै रासि ॥४॥
तेरी कीमति ना पवै सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥
कहणै हाथ न लभई सचि टिकै पति पाइ ॥
गुरमति तूँ सालाहणा होरु कीमति कहणु न जाइ ॥५॥
जितु तनि नामु न भावई तितु तनि हउमै वादु ॥
गुर बिनु गिआनु न पाईऐ बिखिआ दूजा सादु ॥
बिनु गुण कामि न आवई माइआ फीका सादु ॥६॥
आसा अंदरि जंमिआ आसा रस कस खाइ ॥
आसा बंधि चलाईऐ मुहे मुहि चोटा खाइ ॥
अवगणि बधा मारीऐ छूटै गुरमति नाइ ॥७॥
सरबे थाई एकु तूँ जिउ भावै तिउ राखु ॥

गुरमति साचा मनि वसै नामु भलो पति साखु ॥
हउमै रोगु गवाईऐ सबदि सचै सचु भाखु ॥८॥
आकासी पातालि तूँ तृभवणि रहिआ समाइ ॥
आपे भगती भाउ तूँ आपे मिलहि मिलाइ ॥
नानक नामु न वीसरै जिउ भावै तिवै रजाइ ॥९॥१३॥

सार: इच्छा, लगाव और माया-भ्रम हमारी वास्तविकता की समझ को विकृत कर देते हैं जिससे हम क्षणिक अनुभवों को स्थायी तृप्ति समझने लगते हैं। इस उलझन में हम अक्सर दौलत, जवानी, सत्ता की ताक़त और पहचान को ख़ुशी समझने लगते हैं और इन ग़लतफ़हमियों पर अपने अहंकार को हावी होने देते हैं। जो चीज़ उपलब्धि जैसी लगती है, वह एक तरह का बंधन बन सकती है जिससे लालच और खोने के भय का एक निरंतर चक्र बन जाता है। यह संघर्ष केवल व्यक्तिगत नहीं बल्कि एक साँझा मानवीय अनुभव है, समूचा संसार इसी माया-भ्रम में उलझा हुआ है। जागरूकता चीज़ों को छोड़ने से नहीं बल्कि इस पद्धति को पहचानने से शुरू होती है। जब हम समझते हैं कि इच्छा कैसे हमारी सोच को सीमित करती है, लगाव कैसे जागरूकता को कम करता है और अहंकार कैसे माया-भ्रम पर पलता है तब इस भ्रम की पकड़ ढीली होने लगती है। समझदारी माया-भ्रम से लड़ती नहीं है, वह उससे आगे बढ़ जाती है और सदैव रहने का झूठा एहसास समाप्त हो जाता है। जो बचता है, वह है जीवन के साथ एक शांत निरीक्षण और स्थिर जुड़ाव, नियंत्रण की आवश्यकता से मुक्ती। इस बदलाव को अपनाने से एक अधिक अर्थपूर्ण जीवन मिल सकता है जो हमारे वास्तविक अनुभवों की असलियत पर आधारित हो।

तृसना माइआ मोहणी सुत बंधप घर नारि ॥
इच्छा सांसारिक भ्रम पैदा करती है जो बच्चों, रिश्तेदारों, पति और पत्नी सभी को मोहित कर लेती है। यह दर्शाता है कि सांसारिक रिश्ते और भौतिक लगाव शक्तिशाली भटकाव का काम करते हैं जो मन को सच्चाई से दूर ले जाते हैं।

धनि जोबनि जगु ठगिआ लबि लोभि अहंकारि ॥
धन और यौवन संसार को ठग लेते हैं, लोभ, लालच, मोह और अहंकार को जन्म देते हैं। यह उस अज्ञानता को दर्शाता है जो क्षणभंगुर शारीरिक और भौतिक नश्वर चीज़ों को स्थायी सत्य मान लेता है।

मोह ठगउली हउ मुई सा वरतै संसारि ॥१॥
जब सांसारिक आकर्षण धोखा देते हैं तब सहज जागरूकता नष्ट हो जाती है, इसी तरह समाज काम करता है। यह बताता है कि आकर्षण स्पष्टता छीन लेते हैं जिससे व्यक्ति अपने ही हित के विरुद्ध काम करने लगता है। (१)

मेरे प्रीतमा मै तुझ बिनु अवरु न कोइ ॥
हे मेरे प्रियतम, मेरे लिए, तुम्हारे सिवा कोई और नहीं है। यह याद दिलाता है कि हमारी अंतरात्मा ही हमारी एकमात्र सच्ची साथी है जो हमारी आंतरिक खोज को सच में पूर्णतः बहाल रख सकती है।

मै तुझ बिनु अवरु न भावई तूं भावहि सुखु होइ ॥१॥ रहाउ ॥
तुम्हारे अलावा और कुछ भी संतोष नहीं देता, जब तुम प्रसन्न और संतुलित सामंजस्य में रहते हो तभी सच्ची शांति मिलती है। इस संदर्भ में, 'तुम' हमारी अंतरात्मा को संदर्भित करता है जिसके माध्यम से आंतरिक तृप्ति प्राप्त होती है जिसकी हम तलाश करते हैं। (१)(विराम)

नामु सालाही रंग सिउ गुर कै सबदि संतोखु ॥
चिंतन को महत्व देना और अपनाना ज्ञान का सार प्रदान करता है जिससे ऐसी समझ विकसित होती है जो संतोष देती है।

जो दीसै सो चलसी कूड़ा मोहु न वेखु ॥
जो भी दिखाई देता है वह सब चला जाएगा, झूठे मोह को मत देखो। इस दुनिया में जो कुछ भी आप देखते हैं वह क्षणभंगुर है, लगाव धोखे देते हैं इसलिए उनके आकर्षण का विरोध करें। यह इस बात पर ज़ोर देता है कि हमारा शारीरिक अस्तित्व क्षणिक है इससे चिपके रहने से निराशा

होती है। केवल हमारी अंतरात्मा ही हमारे साथ रहती है जो लगातार विकसित होती है और जीवन भर हमारा मार्गदर्शन करती है।

वाट वटाऊ आइआ नित चलदा साथु देखु ॥२॥
हम इस संसार में यात्री बनकर आये हैं और यात्रा के दौरान प्रतिदिन साथियों को बिछड़ते देखते हैं। यही जीवन का प्रतीकात्मक सार है, अनुभवों और संबंधों के माध्यम से एक यात्रा जो निरंतर विकसित होती रहती है। (२)

आखणि आखहि केतड़े गुर बिनु बूझ न होइ ॥
बहुत से लोग बात करते हैं और अपने विचार साँझा करते हैं लेकिन उस ज्ञान के बिना जो अज्ञानता से जागरूकता की ओर ले जाता है। सच्ची समझ हासिल नहीं की जा सकती। यह इस बात पर ज़ोर देता है कि समझ सिर्फ़ आध्यात्मिक अवधारणाओं पर चर्चा करने से नहीं आती बल्कि यह अनुभवात्मक तरीके सीखने से आती है जो मार्गदर्शन प्रदान करता है और आंतरिक स्पष्टता जगाता है।

नामु वडाई जे मिलै सचि रपै पति होइ ॥
अगर किसी को आत्म-चिंतन की महानता मिलती है और वह सच्चाई को अपनाता है तब उसके अंदर विश्वसनीयता की भावना पैदा होती है।

जो तुधु भावहि से भले खोटा खरा न कोइ ॥३॥
जो कुछ भी प्रकृति के नियमों के अनुसार उचित है, वह वास्तव में अच्छा है। इस अवस्था में, कुछ भी झूठा या प्रामाणिक नहीं है। यह दर्शाता है कि भलाई की अच्छाई सार्वभौमिक इच्छा के साथ सामंजस्य बैठाने से पैदा होती है। (३)

गुर सरणाई छुटीऐ मनमुख खोटी रासि ॥
आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि के सार में शरण लेने से, व्यक्ति नकारात्मकता जमा करने वाले मनमानी मन से मुक्त हो जाता है। यह याद दिलाता है कि जब मन स्पष्टता को अपनाता है तब वह अपने स्व-संचालित माया-भ्रम से मुक्त हो जाता है।

असट धातु पातिसाह की घड़ीऐ सबदि विगासि ॥
आठ धातुओं से मिश्रत धातु से सर्वोच्च की मूर्ति बनाई जाती है ताकि आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया जा सके। असत धातु आठ कीमती धातुओं की एक मिश्रित धातु है जो खराब नहीं होती। प्रतीकात्मक रूप से, यह इस विचार के रूपक के रूप में काम करता है कि विवेक सकारात्मक गुणों को अपनाकर पनप सकता है और नकारात्मकता का शिकार नहीं हो सकता।

आपे परखे पारखू पवै खजानै रासि ॥४॥
पारखी स्वयं ही परख करता है और जो योग्य कीमती है उसे ख़ज़ाने में रखता है। यह हमारे विवेक की इरादों का आंकलन करने की क्षमता और जो वास्तविक रूप से सार्थक है उसे अपनाने की शक्ति को दर्शाता है। (४)

तेरी कीमति ना पवै सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥
आपकी कीमत मापी नहीं जा सकती, भले ही हर कोई अपनी पूरी ताकत से इसका आंकलन करने की कोशिश करे, वह यह घोषणा नहीं कर पाएंगे कि उन्होंने ऐसा किया है। प्रतीकात्मक रूप से, 'आप' सर्वव्यापी चेतना का प्रतिनिधित्व करता है और सृष्टि में विविधता के रूप में इसकी विशिष्टता, भाषा की सीमाओं से परे है।

कहणै हाथ न लभई सचि टिकै पति पाइ ॥
शब्द आपकी महानता को व्यक्त नहीं कर सकते, केवल सत्य में स्थिर रहकर ही सच्चा सम्मान मिलता है। इसका मतलब है कि सृष्टि में महानता उसकी कीमत तय करने की कोशिश से नहीं बल्कि सच्चाई में स्थिर रहने से आती है।

गुरमति तूँ सालाहणा होरु कीमति कहणु न जाइ ॥५॥
ज्ञानयुक्त बुद्धि से चेतना सम्माननीय बनती है। इसकी कीमत बताने का कोई और तरीका नहीं है। (५)

जितु तनि नामु न भावई तितु तनि हउमै वादु ॥

जिस शरीर को आत्म-चिंतन करना पसंद नहीं है, उस शरीर में अहंकार बढ़ जाता है। यह बताता है कि आत्म-निरीक्षण की कमी से खुद को बहुत ज़्यादा महत्व देने की भावना बढ़ती है जिससे अपनी कमियों को पहचानने की क्षमता में रुकावट आती है।

गुर बिनु गिआनु न पाईऐ बिखिआ दूजा सादु ॥

ज्ञान की समझ के बिना, जागरूकता हासिल नहीं की जा सकती और द्वैत का भ्रम प्रिय लगने लगता है।

बिनु गुण कामि न आवई माइआ फीका सादु ॥६॥

आंतरिक गुणों को विकसित किए बिना कुछ भी सार्थक नहीं होता, सांसारिक मोह का आकर्षण अंततः खोखला और असंतोषजनक साबित होता है। (६)

आसा अंदरि जंमिआ आसा रस कस खाइ ॥

इच्छाएँ भीतर से जन्म लेती हैं और इन इच्छाओं के माध्यम से, सुख और दुख के स्वाद का अनुभव होता है। यह इंगित करता है कि चाहतों और लालसाओं का चक्र ही सुख और दुख दोनों का स्रोत है।

आसा बंधि चलाईऐ मुहे मुहि चोटा खाइ ॥

हम इच्छाओं से बंधकर, उनका पीछा करते हैं लेकिन बार-बार दर्द सहते हैं। यह दर्शाता है कि हमारी अपेक्षाओं के परिणाम से लगाव, लगातार मानसिक पीड़ा की ओर ले जाता है।

अवगणि बधा मारीऐ छूटै गुरमति नाइ ॥७॥

बुराइयाँ व्यक्ति को बांधती हैं और सताती हैं लेकिन उस बुद्धि के माध्यम से जिसने आत्म-चिंतन का अभ्यास करने के लिए ज्ञान प्राप्त किया है, वह उनके चंगुल से मुक्त हो जाता है। यह एक एहसास है कि हमारी अपनी कमज़ोरियाँ हमारे दुख का कारण बनती हैं लेकिन आत्म-चिंतन हमें इन अहंकार-संचालित कामों से ऊपर उठने में मदद कर सकता है। (७)

सरबे थाई एकु तूँ जिउ भावै तिउ राखु ॥
पूरी सृष्टि में, एक अकेली, सर्वव्यापी ऊर्जा प्रवाहित है जो प्रकृति के नियमों के अनुसार सद्भाव से सृष्टि को बनाए रखती है।

गुरमति साचा मनि वसै नामु भलो पति साखु ॥
ज्ञानयुक्त चिंतन का अभ्यास करके, सत्य मन में बसता है और आत्म-चिंतन से जुड़ाव ही सम्मान और सहारा बन जाता है।

हउमै रोगु गवाईऐ सबदि सचै सचु भाखु ॥८॥
अहंकार का रोग दूर हो जाता है और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि से, व्यक्ति केवल सत्य ही बोलता है। (८)

आकासी पातालि तूँ तृभवणि रहिआ समाइ ॥
असीम, सर्वव्यापी चेतना आकाश, पाताल और तीनों लोकों में व्याप्त है। यह अवधारणा सृष्टि की एक ही पारिस्थिति के तंत्र के रूप में परस्पर जुड़ाव की पुष्टि करती है।

आपे भगती भाउ तूँ आपे मिलहि मिलाइ ॥
चेतना स्वयं ही भक्ति और प्रेम है और वह स्वयं ही मिलन और एकता लाती है।

नानक नामु न वीसरै जिउ भावै तिवै रजाइ ॥९॥१३॥
नानक कहते हैं कि आत्म-चिंतन के अभ्यास को कभी न भूला जाए ताकि प्रकृति की इच्छा के अनुसार जीकर संतोष मिले। (९)(१३)

तत्त्व: गुरु नानक बताते हैं कि जब हम किसी वस्तु की कामना करते हैं तब हम खुद को खुशी की संभावना के लिए तैयार करते हैं, अगर वह मिल जाए या फिर निराशा के लिए भी जब वह न मिले, इससे पता चलता है कि हमारी खुशी और दुख अक्सर हमारी अपनी इच्छाओं से पैदा होते हैं। वह तब बुराई बन जाते हैं जब वह हमारी भावनाओं पर इस तरह हावी हो जाते हैं कि उनको नियंत्रण करना मुश्किल हो जाता है। मन की यह स्थिति उत्साह और डर के लगातार चक्र में फंसा

सकती है जिससे हम वर्तमान पल में मौजूद नहीं रह पाते। इसका समाधान अपनी इच्छाओं को दबाना नहीं है बल्कि उन पर विचार करना और उनके स्वभाव को समझना है। तब हम अपनी इच्छाओं को उनके द्वारा नियंत्रित हुए बिना पहचान सकते हैं क्योंकि हर इच्छा को पूरा करने से संतुष्टि नहीं मिल सकती। प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तालमेल बिठाकर जीना, निरंतर लालच से संघर्ष करने के बजाय, एक स्थिर और आत्म-पोषक संतोष प्रदान करता है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com